P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-4* ISSUE-9* May- 2017
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

नाला सोपारा : किन्नरों की यथार्थ दास्ताँ

सुमन कुमारी वरनवाल
शोध छात्रा,
हिन्दी विभाग,
विश्वभारती विश्वविद्यालय,
शांतिनिकेतन, पश्चिम बंगाल

सारांश

चित्रा मुद्गल ने हिन्दी कथा–साहित्य में अपनी एक विशिष्ट पहचान बनायी है। चित्रा जी का 'नाला सोपारा' भूमंडलीकरण की दुनिया में थर्ड जेंडर पर आधारित श्रेष्ठ उपन्यास है। वर्तमान बाजारी व्यवस्था में चित्रा मुगल ने अपने उपन्यास नाला सोपारा में यह दिखाने का प्रयास किया है कि कैसे लोग अपने पुत्रों को जननांग विकलांगता के कारण अपने घर–परिवार से काटकर अलग अभिशप्त जीवन जीने के लिए उसे किन्नरों के हवाले कर देते हैं जैसे यही उसकी नियति है और फिर उसके त्रासदी आरं□ हो जाती है। सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक व आर्थिक स्तर पर न जाने उसे कितने रूपों में शोषित होना पड़ता है। समाज व राजनीति की मुख्यधारा से थर्ड जेंडर को काटकर सदैव अलग रखा जाता है ताकि उनका विकास न हो सके। यह समाज कभी उनके मन को पढ़ने का प्रयास नहीं करता है कि आखिरकार उनकी क्या चाह है। समाज में निरंतर उनका असम्मान, अपमान ही होता रहा है, पर अब थर्ड जेंडर अर्थात् जननांग विकलांग समाज अपनी चेतना के आधार पर विकसित होने लगा है। अपने स्व व आत्म सम्मान की पहचान उसे सताने लगी है और वह अपने वजूद को प्राप्त करने के लिए संघर्षरत है। उपन्यास बिल्कुल नये तरीके से सृजित बाजारी व्यवस्था में मानवता की तलाश है।

मुख्य शब्द : चित्रा मुद्गल , नाला सोपारा

प्रस्तावना

चित्रा मुद्गल ने अपने उपन्यास 'नाला सोपारा' में विनोद उर्फ बिन्नी उफ विमली के माध्यम से किन्नरों के त्रासद यथार्थ को अभिव्यंजित करने का प्रयास किया है। 223 पृष्ठों में लिखी गयी यह औपन्यासिक रचना न केवल समाज की पुरातनपंथी मानसिकता के यथार्थ की पोल खोलती है बल्कि समाज के दोमुँहेपन को लताड़ती है। उपन्यास की कथा में नायक बिन्नी को जननांग विकलांग के कारण असामाजिक करार देकर परिवार वाले उसे किन्नरों को सुपुर्द कर देते हैं और वह नारकीय सादृश्य जीवन जीने के लिए अभिशप्त हो जाता है।

चित्रा मुद्गल ने विनोद के चरित्र के माध्यम से उन समस्त किन्नरों की दुखती नब्ज को पकड़ने का प्रयास किया है जो अंततः मर्मांतक होती है। अपने घर–परिवार से निष्काषित होने के कारण एक बच्चा कैसे व किन परिस्थितियों और विसंगतियों में प्रतिपल घुटता है। इसका यथार्थ चरित्रांकन 'नाला सोपारा' में है – ''जिस जिन्दगी का हिस्सा अचानक मुझे बना दिया गया था, वह इतना आकस्मिक और अविश्वसनीय था कि मेरा किशोरमन उसे किसी भी रूप में पचा पाने में असमर्थ था। मनुष्य के दो ही रूप अब तक देखे थे मैंने। इस तीसरे रूप से मैं परिचित तो था लेकिन उसे मैं पहले रूप का ही एक अलग हिस्सा मानता था।''[1] स्वभाविक है कि बिन्नी के इस बालपन में पड़े प्रभाव से निकल पाना आसान नहीं था, पर अपने को वह किसी तरह समझदार बनाने की परंपरा में जुट जाता है। मेराज अहमद ने लिखा है – ''किन्नर होना शरीर विज्ञान की एक विकृति है। उसमें यदि कोई विकृति के साथ जन्म ले ले तो उनका कोई दोष नहीं, लेकिन समाज उन्हें जीवित होने के बावजूद मुर्दो के रूप में तब्दील होने पर विवश कर देता है। यही उनकी नियति है।''[2] यह बहुत बड़ा सच है कि समाज इनको हेय दृष्टि से देखता है लेकिन अपने भीतर यह जानने का प्रयास नहीं करता कि वह भी इस समाज का एक अंग व इकाई है वरन् वह उसे हिकारत व नफरत की दृष्टि से देखता है जिसे उपन्यास में चित्रा जी ने बड़ी गंभीरता के साथ व्याख्यियित किया है।

विनोद जहाँ समाज के बने कायदे–कानून में स्वयं को जकड़ा पाता है वही परिवार से विछोह उसे अन्दर ही अन्दर तोड़ती है। परिस्थितियों की मार और समाज की कोढ़ी मानसिकता में विनोद के साथ माँ–पिता भी टूटते हैं।

पिता उसे समाज में मृत घोषित कर घुटते हैं, लेकिन कभी उसे सम्पर्क नहीं करते हैं जबकि माँ विषम परिस्थितियों के बावजूद विनोद से निरन्तर पत्र व्यवहार द्वारा अपना स्नेह उड़ेलती है। वह मां के ममत्व, सामीज्य को प्राप्त करने के लिए सदैव तरसता, कूढ़ता है। वह अपनी माँ की विवशता को भली–भाँति समझता है – ''तू विश्वास कर सकता है तो अपनी बा पर विश्वास न डिगने दे। तू जिस नरक से गुजर रहा है, वहाँ मैं तेरे साथ नहीं हूँ मगर तेरे उस नरक की हर गली मेरी छाती से होकर गुजरती है।''[3]

समाज ने किन्नरों के प्रति जो अशोभनीय ओर क्षुद्र रवैया अपनाया है इस उपन्यास में उसका सस्वर प्रतिरोध हुआ। पूरे किन्नर वर्ग का प्रतिनिधित्व करता हुआ विनोद न सिर्फ अपने परिवार से उपेक्षित होकर घर से निष्कासित होता है बल्कि कई यातनाएँ सहनी पड़ती है। न चाहते हुए भी उसे प्रताड़ित किया जाता है वह सब करने के लिए जो किन्नरों के लिए स्वाभाविक क्रिया–कलाप, हाव–भाव है, लेकिन आम आदमी के लिए वहीं सब अशोभनीय, निंदनीय दृष्टव्य होता है।

शिक्षा के अधिकार से वंचित विनोद उर्फ बिन्नी उर्फ बिमली स्वयं को किन्नरों के माहौल में स्वयं को असहज पाता है। बौद्धिक प्रखरता के कारण वह सदैव अपनी अधूरी शिक्षा पूर्ण करने हेतु संघर्षरत है। शिक्षा प्राप्ति के प्रति सच्ची लगन को देखकर के किन्नरों के समूह की सदस्य पूनम न केवल उसे अपने संचित पैसे देती है अपितु विधायक जी से सिफारिश तक कर आती है। विधायक जी विनोद को शिक्षा पूर्ण करवाने का आश्वासन देकर अपने यहाँ नौकरी पर रख लेते हैं।

शिक्षित होकर विनोद सफल इंसान बनाना चाहता है। समाज में औरों की भाँति सभ्य, शालीन बनकर रहने की उसे आकांक्षा है। इन सबमें वह अपने जनानांग विकलांगता को आड़े आने नहीं देता – ''सर, मैं जिन तिरस्कृत स्थितियों में जी रहा हूँ, उन्हीं स्थितियों में जीते हुए, संघर्ष करते हुए पढ़ना चाहता हूँ।''[4]

विनोद समाज की सड़ी–गली, रूढ़ि मान्यताओं को एक साजिश का एक अंग मानता है। वह समाज की मुख्यधारा से थर्ड जेंडर को काटकर सदैव अलग–थलग रखने वाली राजनीति को भली–भाँति देखता–परखता और सहता है। घर से निष्कासित थर्ड जेंडर प्रतिकूल परिस्थितियों को अपनी नियति मानकर नारकीय जीवन जीने को अभिशप्त है। हाशिए पर फेंके गए इन लोगों की दर्द भरी दास्ताँ बयां करते हुए विनोद समाज की रूग्ण मानसिकता पर करारा प्रहार करता है – ''जननांग विकलांगता बहुत बड़ा दोष है लेकिन इतना बड़ा भी नहीं कि तुम मान लो कि तुम धड़ का मात्र वही निचला हिस्सा भर हो। मस्तिष्क नहीं हो, दिल नहीं हो, धड़कन नहीं हो, आँख नहीं हो। तुम्हारे हाथ–पैर नहीं हैं, हैं, हैं, सब वैसा ही है, जैसे औरों के हैं।''[5]

किन्नरों के यथार्थ जीवन की अभिव्यक्ति करते हुए यह उपन्यास उन्हें अंधेरे प्रकोष्ठों में ढकेलने और नारकीय स्थिति में जीवित रहने के लिए बाध्य करने वालों की पोल खोलता है –''असामाजिक तत्वों के हाथ की कठपुतली बनने में जितनी भूमिका किन्नरों के संदर्भ में सामाजिक बहिष्कार–तिरस्कार की रही है, उससे कम उनके पथभ्रष्ट निरंकुश सरदारों और गुरूओं की नहीं। ऊपर से विकल्पहीनता की कुंठा ने उन्हें आँधी का तिनका बना दिया।''[6]

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में आज भी किन्नरों की स्थिति जस की तस है। जननांग विकलांगता के कारण विनोद का घर से निष्कासन के उपरांत किन्नर जीवन के प्रति प्रतिरोध करने पर सरदार का अत्याचार चरम सीमा पर था। लेकिन विधायक जी से परिचय के बाद सरदार के स्वभाव में विनोद के प्रति थोड़ा बदलाव हुआ – ''किसी लपलपाते छुरे की नोंक और देशी कटे के सीने में उतरने को बेचैन छर्रों ने मुझे बंधक बनाने का प्रयत्न नहीं किया।''[7]

किन्नर जीवन की अपनाने में मासूम बच्चों को कितने अन्याय, अत्याचार का सामना करना पड़ता है इसकी झाँकी इस उपन्यास में देखने को मिलती है। उपन्यास के अंत में विनोद किन्नरों के सरदार दोहरे चरित्र का पर्दाफाश करता है – ''खतना कर रहे थे सरदार उस लड़के का जिसे लाकर कोई ठिकाने पर आसरे के लिए पहुँचा गया था और जो खतने की आड़ में हुई ज्यादती के चलते हफ्ते भर बाद मौत के मुँह में जा गिरा।''[8]

विनोद जहाँ अपने भविष्य को उज्जवल बनाने के लिए विधायक जी का दामन थामता है तो वहीं विधायक जी उसके भोलेपन को राजनीतिक तिकड़मों में फँसाकर अपनी स्वार्थ साधने का प्रयत्न करते हैं। साथ ही अन्य राजनीतिक पार्टियाँ भी उन्माद की आग में अपनी रोटियाँ सेंकने को आतुर दिख पड़ती है – ''किन्नरों के आरक्षण का मामला उठेगा, लपटें आसमान छुएगी।''[9]

किन्नरों के नेता के रूप में विनोद को खड़ा किया जाता है तथा उसे राजनीतिक हथकंडे अपनाने का गुर भी अन्य पार्टियों के लोग ही सिखाते हैं – ''जनतांत्रिक देश में जाहिर है, जनतांत्रिक हथियारों से ही लड़ना पड़ता है।''[10] लेकिन इन सबके बावजूद भी विनोद किन्नरों के उत्थान के लिए कृत संकल्प लेता है। किन्नरों को विरासत में मिले नारकीय जीवन से मुक्ति का पथ तलाशता है। यह कहना गलत न होगा कि इक्कीसवीं सदी का भारत अपनी परम्परागत मानसिकता रूढ़ हो चुका है, जिसे वह बदलना नहीं चाहता है, पर भीतरी कश्मकश विकल्प के लिए बेधती है जिससे कि नया रास्ता भविष्योन्मुखी दृष्टि की ओर ले जाए। समाज की इस जड़ता के ऊपर विनोद का कथन बड़ा सारगर्भित दिखाई पड़ता है – ''सड़ी–गली मान्यताओं को फाड़कर फेंक देना होगा। जला देना होगा। भस्म कर देना होगा। दुस्साहस करना होगा। मात्र साहस भर पर्याप्त नहीं। जननांग दोषी औलाद से क्षमा माँगते हुए।''[11]

विनोद जहाँ किन्नर बिरादरी को स्वाभिमान और भविष्योन्मुखी बनाकर अंधकारमय सड़ांध भरे जीवन से

बाहर कर स्वच्छ हवा में साँस लेने की पुरजोर कोशिश में है तो वहीं उसकी किन्नर साथी पूनम जोशी के साथ दर्दनाक वहशी रूप से बलात्कार होता है। वह स्थिति इतनी गम्भीर हो जाती है कि उसे आई.सी.यू. में दाखिल करना पड़ता है। चंडीगढ़ से लौटे विनोद यह सूचना पाते ही हतप्रभ हो दुःख, विषाद से घिरकर मदर मेरी की प्रतिमा के आगे नतमस्तक हो करूणा भीख माँगता है – ''सीढ़ियाँ उतरते ही मदर मेरी की प्रतिमा के सामने जलती जगमग मोमबत्तियों ने बरबस खींच लिया अपनी ओर। हाथ जुड़ गए और हृदय में अंजुरियां पसर गयीं।''[12]

पूनम जोशी के साथ हुए अन्याय के बाद विनोद अन्दर से काँप गया – ''लेकिन, पोर–पोर टूट जाने के बाद भी लड़ाई के मेरे हथियार जुदा हैं। इस लोमहर्षक घटना के बाद भी उन हथियारों से मेरा भरोसा उठा नहीं। आवेश और विवेक गुत्थमगुत्था हो रहे हैं मेरे भीतर।''[13]

किन्नर बिरादरी को लेकर अनशन पर बैठने का विनोद ने संकल्प लिया था। लेकिन पूनम जोशी की वीभत्स स्थिति और मुम्बई में अपनी माँ की नाजुक हालत ने विनोद की मनःस्थिति को डवाँडोल कर दिया। साथ ही विधायक जी के पार्टी का दवाब उसे उद्विगन बनाता है – आन्दोलन से न मुँह मोड़ना चाहता हूँ, न मुँह मोडूँगा लेकिन आस्तीन के विषधरों को मैं कभी क्षमा नहीं कर सकता...।''[14]

कड़ी जद्दोजहद के बाद विनोद अपनी माँ वंदना से मिलने मुम्बई जाता तो है, लेकिन वहाँ पहुँचकर उसे माँ का शव और पूर्ण अधिकार मिलता है जिसके लिए वह आजीवन तरसता रहा। साथ ही अपनी स्वर्गवासी माँ का माफीनामा भी मिलता है – ''अपने मंझले बेटे विनोद शाह जिसे हम सभी प्यार से बिन्नी कहकर पुकारते थे, प्रार्थना करती हूँ, वह अपनी बाकी इस अक्षम्य भूल को क्षमा कर दे और अपने घर वापस लौट आए।''[15]

उपन्यास में विनोद के संघर्षरत जीवन की पूरी त्रासदी के उपरांत माँ के ममत्व, स्नेह की चाह को पाने की आकांक्षा में वह मुम्बई जाता है, घर–परिवार को सअधिकार प्राप्त करता है, किन्तु अपने जीवन का सबसे अहम भाग ममत्व की छाँव उससे छीन जाती है। यहाँ वह सब कुछ पाकर भी अधूरा है। लिंग से तो प्रकृति ने उसे पहले ही अधूरा ना दिया था, लेकिन माँ के स्नेह और आशीर्वाद से पूर्णरूपेण वंचित जीवन विनोद के लिए बोझ सादृश्य है।

उद्देश्य

भूमण्डलीकरण के दौर में समाज बड़ी द्रुतगति के साथ आगे बढ़ रहा है समाज में परिव्याप्त रूढ़ियों अन्धविश्वासों वर्ग–वर्ण भेद, बाल–विवाह, विधवा, विवाह छूआ–छूत आदि से थोड़ी बहुत मुक्ति जरूर मिली है पर किन्नरों के जीवन में रत्ती भर भी परिवर्तन नहीं आया है। भारतीय समाज में इनकी स्थिति अस्पृश्यों से भी बद्तर है। पूरा भारतीय समाज इन्हें हिकारत की दृष्टि से देखता है। भारतीय समाज कभी भी उनके भीतरी मानवीय प्रवृत्ति को देखने का प्रयास ही नहीं करता है केवल लिंग भेद के कारण यह समाज से काटकर बेघर कर दिया जाता है इस परिवर्तित होते हुए समाज में उनके अस्तित्व बोध को समझना होगा तभी उनके सुनहरे भविष्य की हम आशा कर सकते हैं।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि 'नाला सोपारा' चित्रा मुद्गल का भूमंडलीकरण के दौर में किन्नरों के नारकीय जीवन का यथार्थ दास्तां है।

संदर्भ सूची

1. *मुद्गल चित्रा – नाला सोपारा, पोस्ट बॉक्स न0 203 – सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली,संस्करण – 2016 पृ0 सं0–24–25*
2. *संपादक – डॉ0 एम. फीरोज़ अहमद – वाङ्मय, त्रैमासिक हिन्दी पत्रिका, जनवरी–मार्च–2017, पृ0–12*
3. *मुद्गल चित्रा – नाला सोपारा, पोस्ट बॉक्स न0 203 – सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली,संस्करण – 2016 पृ0 सं0–71*
4. *मुद्गल चित्रा – नाला सोपारा, पोस्ट बॉक्स न0 203 – सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली,संस्करण – 2016 पृ0 सं0– 38*
5. *मुद्गल चित्रा – नाला सोपारा, पोस्ट बॉक्स न0 203 – सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली,संस्करण – 2016 पृ0 सं0–50*
6. *मुद्गल चित्रा – नाला सोपारा, पोस्ट बॉक्स न0 203 – सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली,संस्करण – 2016 पृ0 सं0–86*
7. *मुद्गल चित्रा – नाला सोपारा, पोस्ट बॉक्स न0 203 – सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली,संस्करण – 2016 पृ0 सं0–86*
8. *मुद्गल चित्रा – नाला सोपारा, पोस्ट बॉक्स न0 203 – सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली,संस्करण – 2016 पृ0 सं0–207*
9. *मुद्गल चित्रा – नाला सोपारा, पोस्ट बॉक्स न0 203 – सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली,संस्करण – 2016 पृ0 सं0–173*
10. *मुद्गल चित्रा – नाला सोपारा, पोस्ट बॉक्स न0 203 – सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली,संस्करण – 2016 पृ0 सं0–179*
11. *मुद्गल चित्रा – नाला सोपारा, पोस्ट बॉक्स न0 203 – सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली,संस्करण – 2016 पृ0 सं0–177*
12. *मुद्गल चित्रा – नाला सोपारा, पोस्ट बॉक्स न0 203 – सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली,संस्करण – 2016 पृ0 सं0–202*
13. *मुद्गल चित्रा – नाला सोपारा, पोस्ट बॉक्स न0 203 – सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली,संस्करण – 2016 पृ0 सं0–203*
14. *मुद्गल चित्रा – नाला सोपारा, पोस्ट बॉक्स न0 203 – सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली,संस्करण – 2016 पृ0 सं0–205*
15. *मुद्गल चित्रा – नाला सोपारा, पोस्ट बॉक्स न0 203 – सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली,संस्करण – 2016 पृ0 सं0–218*